भिक्षा-विचार : जैन तथा वैदिक दृष्टि से

('उञ्छ' शब्द के सन्दर्भ में)

डॉ. अनीता बोथरा*

भाण्डारकर प्राच्यविद्या संस्था में प्राकृत महाशब्दकोश के लिए विविध शब्दों की खोज करते हुए भिक्षावाचक बहुत सारे शब्द सामने आये। आचारांग, सूत्रकृतांग जैसे अर्धमागधी ग्रन्थों में, औपदेशिक जैन महाराष्ट्री साहित्य में, मूलाचार, भगवती आराधना जैसे जैन शौरसेनी ग्रन्थों में तथा अपभ्रंश, पुराण और चरित ग्रन्थों में भिक्षाचर्या के लिए उञ्छवित्ति, पिंडेसणा, एसणा, भिक्खायरिया, भिक्खावित्ति, गोयरी, गोयरचरिआ तथा महुकारसमावित्ति आदि शब्दों का प्रयोग किया हुआ दिखाई दिया। वैदिक परम्परा के श्रुति, स्मृति तथा पुराण ग्रन्थों में उञ्छवृत्ति, भिक्षाचर्या, भिक्षावृत्ति तथा माधुकरी ये चार शब्द भिक्षाचर्या के लिए उपयोजित किये हुए दिखाई दिये। उञ्छ तथा उञ्छवृत्ति इन शब्दों पर ध्यान केन्द्रित करके दोनों परम्पराओं के प्रमुख तथा प्रतिनिधिक ग्रन्थों में इस विषय की विशेष खोज की।

भारतीय संस्कृति कोश में वैशेषिक दर्शन के सूत्रकर्ता 'कणाद' के बारे में निम्नलिखित जानकारी मिलती है -

महर्षि कणाद खेत में गिरे हुए धान्यकण इकट्ठा करके जीवन निर्वाह करते थे, इसलिए वे कणाद, कणभक्ष तथा कणभुज् इन नामों से पहचाने जाते थे। वैशेषिक सूत्र की 'न्यायकन्दली' व्याख्या में यह स्पष्ट किया है (न्यायकन्दली पृष्ठ ४)। 'कणाद' के शब्द के स्पष्टीकरण से उञ्छवृत्ति का संकेत मिलता है।

जैन प्राकृत साहित्य :-

जैन प्राकृत साहित्य में कौन-कौनसे ग्रन्थों में कौन-कौनसे सन्दर्भ में उञ्छ या उञ्छ शब्द के समास प्रयुक्त हुए हैं इसकी सूक्ष्मता से जाँच की। निम्नलिखित प्राकृत ग्रन्थों से उञ्छ सम्बन्धी सन्दर्भ प्राप्त हुए।

---

*सन्मति-तीर्थ, फिरोदिया हॉस्टेल, ८४४, शिवाजीनगर, बी एम्.सी.सी. रोड, पुणे- ४११००४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्धमागधी ग्रन्थ :-

आचारांग पाया गया एक ही सन्दर्भ विशेष महत्त्वपूर्ण है । सूत्रकृतांग और स्थानांग में अल्पमात्रा में सन्दर्भ दिखाई दिये । प्रश्नव्याकरण की टीका का उञ्छ शब्द का स्पष्टीकरण बहुत ही महत्त्वपूर्ण लगा । उत्तराध्ययन में 'उञ्छ की एषणा' इस प्रकार का सन्दर्भ पाया । पिण्डेषणा या भिक्षाचर्या दशवैकालिक का महत्त्वपूर्ण विषय होने के कारण उसमें उञ्छ शब्द अनेकबार दिखाई दिया है । ओघनिर्युक्ति में उञ्छवृत्ति के अतिचारों का सन्दर्भ मिला ।

जैन महाराष्ट्री ग्रन्थ :-

आवश्यकनिर्युक्ति, ओघनिर्युक्तिभाष्य, निशीथचूर्णि, वसुदेवहिण्डी, उपदेशपद, जंबुचरिय, कथाकोशप्रकरण, ज्ञानपञ्चमीकथा तथा अन्नायउञ्छकुलकम् इन जैन महाराष्ट्री ग्रन्थों में उञ्छ सम्बन्धी उल्लेख उपलब्ध हुए ।

जैन शौरसेनी तथा अपभ्रंश ग्रन्थों में 'उञ्छ' शब्द की खोज की। दोनों की उपलब्ध शब्दसूचियों में ये शब्द नहीं हैं । इन दोनों भाषाओं में प्रायः दिगम्बर आचार्योंने ही बहुधा अपनी साहित्यिक गतिविधियाँ प्रस्तुत की हैं । हो सकता है कि उञ्छ शब्द से जुडी हुई वैदिक धारणाएँ ध्यान में रखते हुए उन्होंने उञ्छ शब्द का प्रयोग हेतुपुरस्सर टाला होगा । उञ्छ शब्द से जुडे हुए अप्रासुक, सचित् वनस्पतियों के (धान्य के) सन्दर्भ ध्यान में रखते हुए आचारकठोरता का पालन करनेवाले दिगम्बर आचार्यों ने भिक्षावाचक अन्य शब्दों का प्रयोग किया लेकिन उञ्छवृत्ति का निर्देश नहीं किया ।

वैदिक साहित्य :

वैदिक साहित्य में लगभग १०० ग्रन्थों में उञ्छ तथा उञ्छ के समास पाये गये । तथापि प्राचीनता तथा अर्थपूर्णता ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित ग्रन्थों में से सामग्री का चयन किया । चयन करते हुए यह बात भी ध्यान में आयी कि ऋग्वेद आदि चार वेद, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद इन ग्रन्थों में उञ्छ शब्द का कोई भी प्रयोग दिखाई नहीं दिया । उञ्छ तथा उञ्छ के समास महाभारत के सभापर्व, आश्वमेधिकपर्व तथा शान्तिपर्व आदि पर्वों में विपुल मात्रा में उपलब्ध हुए । कौटिलीय अर्थशास्त्र में दो अलग अलग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थों में ये शब्द पाया गया । मनुस्मृति में उञ्छवृत्ति के बारे में काफी चर्चा की गई है । भागवदपुराण तथा ब्राह्मणपुराण में अत्यल्पमात्रा में प्रयोग उपलब्ध हुए । पुराणों में से शिवपुराण में सर्वाधिक सन्दर्भ दिखाई दिये ।

दोनों परम्पराओं से प्राप्त इन सन्दर्भो का सूक्ष्मरीति से निरीक्षण यहाँ प्रस्तुत किया है । वैदिक परम्परा में 'उञ्छ' शब्द का प्रयोग धातु (क्रियापद) तथा नाम दोनों में प्रयुक्त है । धातुपाठ में यह उपलब्ध है ।[१] उञ्छक्रिया का अर्थ 'धान्य कण के स्वरूप में इकट्ठा करना' (to gather, to collect, to glean) इस प्रकार है ।[२] यशस्तिलकचम्पू में 'उञ्छति चुण्टयति' (to pluck) इस अर्थ में इस क्रिया का प्रयोग है ।[३] 'उञ्छ' क्रिया का सम्बन्ध वैयाकारणोंने 'ईष्' क्रियापद से जोडा है ।[४] 'उञ्छन' क्रिया से प्राप्त जो भी धान्य कण है उस समूह को 'उञ्छ' कहा गया है ।

जैन परम्परा के प्राकृत ग्रन्थों में उञ्छ क्रिया का 'क्रिया स्वरूप' में प्रयोग अत्यल्प मात्रा में दिखाई दिया । जो भी सन्दर्भ पाए गये वे सभी 'नाम' ही हैं । कही भी धान्य कण अथवा पत्र-पुष्प आदि का जिक्र नहीं किया है । 'भिक्षु द्वारा एकत्रित की गई साधु प्रायोग्य भिक्षा', इस अर्थ में ही इस शब्द का प्रयोग किया गया है ।

वैदिक परम्परा के ग्रन्थों में से उपलब्ध संदर्भो का चयन करने से 'उच्छ' का जो एक समग्र चित्र सामने उभर कर आता है वह इस प्रकार है। चान्द्र व्याकरण में उञ्छ क्रिया का प्रयोग 'इकट्ठा करना' इस सामान्य अर्थ में है । यहाँ कहा गया है कि, बेरों को चुननेवाला बदरिक कहलाता है ।[५] कौटिलीय अर्थशास्त्र में कहा है कि उञ्छजीवि आरण्यक, राजा को कररूप में उञ्छषड्भाग अर्पित करते हैं । यहाँ भी सिर्फ इकट्ठा करना अर्थ ही है ।[६]

---

१. धातुपाठ - ७.३६, २८.१३
२. पाणिनी-४.४.३२; दण्डविवेक १ (४४.४); जैनेन्द्रव्याकरण ३.३.१५५ (२१४.१५)
३. यशस्तिलकचम्पू-१.४४९.६
४. सिद्धान्तकौमुदी-६.१.८९; दैवव्याकरण १६९
५. चान्द्रव्याकरण - ३.४.२९
६. कौटिलीय अर्थशास्त्र १.१३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रामायण में यद्यपि उञ्छवृत्ति के सन्दर्भ अत्यल्प हैं तथापि इस व्रत की दुष्करता उसमें अधोरेखित की गई है ।[७] उञ्छवृत्ति का आचरण करनेवाले को 'उञ्छशील' कहते हैं ।[८] लेकिन 'उञ्छशिल' ऐसा भी शब्द प्रयोग देखा जाता है ।[९] 'उञ्छ' का मतलब है मार्ग में या खेत में गिरे हुए धान्य कण इकट्ठा करना और 'शिल' का अर्थ है धान्य के भुट्टे इकट्ठे करना । इन दोनों को मिलकर 'ऋत' संज्ञा दी है ।[१०] उञ्छजीविका[११] उञ्छजीविकासम्पन्न[१२] उञ्छधर्मन्[१३] उञ्छवृत्ति[१४] आदि शब्द प्रयोग उन लोगों के बारे में आये हैं जिन्होंने धान्यकण इकट्ठा करके उन पर उपजीविका करने का व्रत स्वीकार किया है ।

उञ्छवृत्ति व्रत विप्र, [१५]ब्राह्मण[१६] तथा गृहस्थ[१७] स्वीकार करते हैं । इसका मतलब यह हुआ कि गृहस्थाश्रमी लोग यह व्रत धारण करते थे । आश्वमेधिकपर्व में एक विप्र की पत्नी, पुत्र तथा पुत्रवधू के द्वारा भी यह व्रत ग्रहण करने का उल्लेख है ।[१८] मुनि[१९] तथा तापस[२०] भी इस व्रत को ग्रहण करते थे । अर्थात् वानप्रस्थाश्रम और संन्यासाश्रम में भी उञ्छवृत्ति के द्वारा उपजीविका करने का प्रघात था ।

---

७. अयोध्याकाण्ड-२.२१.२ (ड
८. अमरकोश - २, ९, २
९. वाराहगृह्यसूत्र - ९.२; भागवद्पुराण-७.११.१९; मनुस्मृति-४.५; सांख्यायनगृह्यसूत्र-४.११.१३
१०. मनुस्मृति-४.५
११. लिङ्गानुशासन, हेमचन्द्र-११३.१६; परमानन्दनाममाला ३६९९; स्कन्दपुराण-३.२.३३
१२. अभयदेव-स्थानांग टीका २६७ब.५
१३. आरण्यकपर्व-३.२४६.२१
१४. वैखानसधर्मसूत्र-१.५.५
१५. आश्वमेधिकपर्व-१४.९३.७; विष्णुधर्मोत्तरपुराण-३.२३७.२८
१६. महाभाष्य - १.४.३; ३१३.१३
१७. शान्तिपर्व-१२.१८४.१८
१८. आश्वमेधिकपर्व-अध्याय ९३
१९. आरण्यकपर्व-३.२४६.१९; शब्दरत्नसमन्वयकोश-७४.७; ३००.१७; सांख्यायनगृह्यसूत्र-४.११.१३; शान्तिपर्व-३६३-१,२
२०. बृहत्कथाकोश-६६.३४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उञ्छव्रत में धान्यकण या धान्यबीज खेतों से इकट्ठा करते थे ।[२१] जो धान्यकण या बीज भुट्टों से खेत में पडकर गिरे हुए हैं वे एक-एक करके चुने जाते थे ।[२२] इस व्रत के धारक लोग पतित तथा परित्यक्त धान्य कण भी इकट्ठा करते थे ।[२३] इसके लिए क्षेत्र स्वामी की अनुमति नहीं मानी गई थी ।[२४] खलिहान में बचे हुए धान्यकण भी लेने की विधि दी है ।[२५] धान जब खेत से बाजार तक ले जाया जाता है तब भी बहुत से धान्यकण गिरते हैं । इसलिए रास्ते से या बाजार से भी इकट्ठे किये जा सकते थे।[२६] एक जगह से कितने धान्यकण इकट्ठे किये जायें इसका भी प्रमाण निश्चित किया है । एक एक धान्यकण चुनके एक जगह से एक मुट्ठी धान्य ही इकट्ठा किया जाता था । इसके लिए कुन्ताग्र[२७] गुटक[२८] इन शब्दों का प्रयोग किया गया है, अनेक जगहों में अल्पमात्रा में उञ्छग्रहण करने का विधान है ।[२९] इसका कारण यह है कि किसी को भी इस ग्रहण से पीडा न हो।[३०] चरक संहिता में शोधनी से धान्यकण इकट्ठे करने का उल्लेख है ।[३१] उञ्छवृत्ति से इकट्ठे किये धान्य का पिष्ठ बनाया जा सकता था तथा पानी में मिलाकर काँजी वगैरह बनाई जाती थी ।[३२] रसास्वाद के लिए उसमें नमक आदि चीजें

---

२१. मनुस्मृति टीका (सर्वज्ञानारायना) १०.११०; कौटिलीय अर्थशास्त्र अध्याय-४५, पृष्ठ ६१
२२. काशिका-४.४.३२; ६.१.१६०; अपरार्क ऑफ याज्ञवल्क्यस्मृति - १६७.३; स्मृतिचन्द्रिका - II 451.16
२३. दण्डविवेक - १(४४.४); अपरार्क ऑफ याज्ञवल्क्यस्मृति-१६७.३; स्मृतिचन्द्रिका - II 451.16
२४. मनुस्मृति - टीका (सर्वज्ञानारायना) १०.११२
२५. दण्डविवेक - १(४४.४); चन्द्रवृत्ति-१.१.५२
२६. मनुस्मृति - टीका (सर्वज्ञानारायना) ४.५; भागवद्पुराण- ७.११.१९
२७. पाण्डवचरित-१८.१४३
२८. दीपकलिका ऑन याज्ञवल्क्यस्मृति - १.१२८ (१७.१७)
२९. हारलता - ९.८.९; अभयदेव-स्थानांगटीका - २१३अ. १२
३०. मनुस्मृति - ४.२
३१. चरकसंहिता - ८.१२.६६(८५)
३२. शिवपुराण - ३.३२.६; आश्वमेधिकपर्व - ९३.९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मिलाने का कहीं उल्लेख नहीं है इसलिए उञ्छवृत्ति के लोग नीरस आहार का ही सेवन अल्पमात्रा में करते थे ऐसा प्रतीत होता है। शिवपुराण में उञ्छ से अर्जित द्रव्य का भी उल्लेख वैशिष्ट्यपूर्ण है। उस द्रव्य को शुद्ध द्रव्य कहा है। शुद्ध द्रव्य का दान देने से हुई पुण्यप्राप्ति का भी वहाँ जिक्र किया है।[33]

उञ्छवृत्ति से रहनेवाले लोगों के लिए खग[34] तथा कबूतर[35] की उपमा भी प्रयुक्त की है। उञ्छशीलवृत्ति को 'कापोतव्रत' भी कहा है।[36] जो मुनि या तापस खेती-बाडी से दूर अरण्यों में निवास करते थे वे आरण्य से निसर्गतः प्राप्त फल, कन्द, मूल, पत्ते आदि पर भी उपजीविका करते थे। उन्हें भी उञ्छजीवी कहा है।[37]

महाभारत के सभापर्व में उञ्छवृत्तिधारी चार राजाओं का निर्देश है। अनेक नाम हैं - हरिश्चन्द्र, रन्तिदेव, शिबि और बलि।[38] आश्वमेधिक पर्व तथा शान्तिपर्व में दो बडे बडे बहुत विस्तृत उपाख्यान आये हैं। उनका नाम ही 'उञ्छवृत्तिउपाख्यान' है। उञ्छवृत्ति से अर्जित उपजीविका साधनों का अगर दान दिया तो व्रतधारी को अनशन ही होता है। उसका फल यज्ञ से भी अधिक कहा है। स्वर्गप्राप्ति भी कही है।

नमूने के तौर पर वैदिक परम्परा के ये जो उल्लेख दिये हैं उससे सिद्ध होता है कि 'व्रत के स्वरूप वैदिकपरम्परा में' इस विधि का प्रचलन अत्यधिक था। जैनपरम्परा में भी उञ्छ शब्द का प्रयोग तो पाया जाता है। लेकिन उसका स्वरूप पहले देखेंगे और बाद में शोधनिबन्ध के निष्कर्ष तक जायेगें।

प्राकृत साहित्य में कालक्रम से तथा भाषाक्रम से कौन-कौन से ग्रन्थों

---

३३. शिवपुराण - १.१५.३१
३४. बुद्धचरित - ७.१५
३५. आश्वमेधिक पर्व - ९३.२
३६. आश्वमेधिकपर्व - ९३.५
३७. ब्रह्माण्डपुराण - १.३०.३६
३८. सभापर्व - २.२२५.७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में 'उञ्छ' शब्द का प्रयोग हुआ है और किस अर्थ में हुआ है तथा व्याख्या, टीका आदि में उनका स्पष्टीकरण किस तरह दिया गया है यह प्रथम देखेंगे।

आचारांग अंग आगम के दूसरे श्रुतस्कन्ध में 'उञ्छ' शब्द का प्रयोग केवल भिक्षा से सम्बन्धित न होकर भिक्षा के साथ-साथ छादन, लयन, संथार, द्वार, पिधान और पिण्डपात इनसे जुडा हुआ है । इधर केवल यह अर्थ निहित है कि उपर्युक्त सब चीजें साधु प्रायोग्य और प्रासुक होना आवश्यक है । टीकाकार अभयदेव ने कहा है कि - 'उञ्छं इति छादनाद्युत्तरगुणदोषरहित:'[३९]

सूत्रकृतांग के पहले श्रुतस्कन्ध में 'उञ्छ' शब्द का अर्थ 'बयालीस दोषों से रहित आहार ग्रहण करना' ऐसा दिया है ।[४०] शीलाङ्काचार्य ने सूत्रकृतांग १.७.२७ की वृत्ति में 'अज्ञातपिण्ड' का अर्थ अन्तप्रान्त (बासी) तथा पूर्वापर अपरिचितों का पिण्ड, इस प्रकार का स्पष्टीकरण किया है ।

सूत्रकृतांग की चूर्णि में 'उञ्छ' के द्रव्यउञ्छ (नीरस पदार्थ) और भावउञ्छ (अज्ञात चर्या) ऐसे दो भेद किये हैं ।[४१] वृत्तिकार ने इसका अर्थ-भिक्षा से प्राप्त वस्तु ऐसा किया है ।

स्थानांगसूत्र में उञ्छजीविकासम्पन्न और जैन सिद्धान्तों के प्रज्ञापक साधु का निर्देश है ।[४२]

प्रश्नव्याकरण के संवरद्वार के पहले अध्ययन में अहिंसा एक पञ्चभावना पद के अन्तर्गत आये हुए 'आहारएसणाए सुद्धं उञ्छं गवेसियव्वं'[४३] इस पद से यह कहा है कि साधु शुद्ध, निर्दोष तथा अल्पप्रमाण में आहार की गवेषणा करे ।

प्रश्नव्याकरण के टीकाकार ने उञ्छगवेषणा शब्द पर विशेष प्रकाश डाला है । कहा है कि, 'उञ्छो गवेषणीय इति सम्बन्ध:, किमर्थमत आह पृथिव्युदकाग्निमारुततरुगणत्रसस्थावरसर्वभूतेषु विषये या संयमदया-संयमात्मिका

---

३९. आचारांग टीका ३६८ब.१२
४०. सूत्रकृतांग-१.२.३.१४; सूत्रकृतांग टीका - ७४ब.११
४१. सूत्रकृतांग चूर्णि - पृ. ७४
४२. स्थानांग-४.५२८
४३. प्रश्नव्याकरण टीका - ६.२०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घृणा न तु मिथ्यादृशामिव बन्धात्मिका तदर्थ-तद्धेतो-शुद्धः-अनवद्यः उञ्छो भैक्षं गवेषयितव्यः ।[४४]

इससे स्पष्ट होता है कि वैदिकों की तरह खेत में जाकर तथा अरण्य में जाकर धान्य, फल, फूल, पत्ते आदि इकट्ठा करना टीकाकार को मान्य नहीं है । यह सन्दर्भ इस शोधनिबन्ध के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है ।

उत्तराध्ययन इस मूलसूत्र के ३५वें 'अणगारमार्गगति' अध्ययन में 'उञ्छ' शब्द का अर्थ अलग-अलग घरों से थोडी-थोडी मात्रा में तथा उद्गमादि दोषों से रहित लाई हुई भिक्षा, ऐसा टीका के आधार से भी जान पडता है ।[४५]

उञ्छ शब्द के सबसे अधिक सन्दर्भ दशवैकालिक सूत्र में दिखाई देते हैं । इसमें उञ्छ शब्द तीन बार 'अन्नाय' के साथ[४६] और दो बार स्वतन्त्र रूप से आया है ।[४७] निशीथचूर्णि में भी 'अन्नायउंछिओ साहू' इस प्रकार का विशेषणात्मक प्रयोग दिखाई देता है ।[४८] ओघनिर्युक्ति भाष्य ९६ में 'अण्णाउञ्छं' शब्द का प्रयोग हुआ है ।

'अन्नाय' अर्थात् अज्ञात इस शब्द का स्पष्टीकरण दशवैकालिक टीका तथा दशवैकालिक के दोनों चूर्णिकारों ने विशेष रूप से दिया है । हारिभद्रीय टीका में कहा है - 'उञ्छं भावतो ज्ञाताज्ञातमजल्पनशीलो धर्मलाभमात्राभिधायी चरेत् ।'[४९]

जिनदासगणि ने चूर्णि में कहा है-

'भावुंछं अन्नायेण, तमन्नायं उञ्छं चरति ।'[५०]

अगस्त्यसिंह की चूर्णि में तीन-चार प्रकार से इसका स्पष्टीकरण

---

४४. प्रश्नव्याकरण टीका १०७ब. १३ ते १५

४५. उत्तराध्ययन ३५.१६; उत्तराध्ययन टीका - ३७५ अ.९

४६. दशवैकालिक - ९.३.४; १०.१९; दश.चूर्णि २.५

४७. दशवैकालिक - ०.२३; १०.१७

४८. निशीथचूर्णि - २.१५९.२३

४९. दशवैकालिक टीका - २३१ब.७

५०. दश.जिनदासगणि चूर्णि - पृ. ३११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिया है ।[५१] अन्तिमतः अज्ञात शब्द का तात्पर्य यह फलित होता है कि खुद का परिचय दिये बिना तथा अपरिचित कुलों से अल्पप्रमाण में उञ्छ की गवेषणा करनी चाहिए । प्रचलित छन्द शब्द का प्रयोग नये अप्रचलित अर्थ से करने के लिए 'अन्नायउञ्छं' शब्द के इतने सारे स्पष्टीकरण दिखाई देते हैं ।

वसुदेवहिण्डी में एक जैन साधु ने उञ्छवृत्तिधारक ब्राह्मण[५२] गृहस्थद्वारा भिक्षा ग्रहण करने का महत्त्वपूर्ण उल्लेख पाया जाता है । चूँकि साधु ने इस प्रकार के गृहस्थ से भिक्षा ली, इसका मतलब यह हुआ कि उसने यह भिक्षा प्रासुक और एषणीय मानी । इसके सिवा ब्राह्मण की साधु के प्रति परमश्रद्धा होने का उल्लेख है । इसमें दोनों परम्पराओं की एक-दूसरे के प्रति आदर रखने की यह भावना निश्चित रूप से स्पृहणीय है ।

कथाकोशप्रकरण में एक स्थविरा के द्वारा उञ्छवृत्ति से काष्ठ इकट्ठा करने का उल्लेख है ।।[५३] इसका मतलब यह हुआ कि, 'केवल भिक्षा के लिए ही नहीं, अन्य चीजों के लिए भी इकट्ठा करना' यह उञ्छ शब्द का प्रयोग दिखाई देता है ।

आवश्यक निर्युक्ति १२९५ में नारद-उत्पत्ति की एक कथा दी गई है । उसमें कहा है कि यज्ञयश तापस का यज्ञदत्त नाम का पुत्र और सोमयशा नाम की स्नुषा थी । उनका पुत्र नारद था । वह पूरा कुटुम्ब उञ्छवृत्ति से निर्वाह करता था । उसमें भी वे लोग एक दिन उपवास और एव दिन भोजन लेते थे ।

ज्ञानपञ्चमी कथा में अरण्य से उञ्छादिक ग्रहण करके अपनी पत्नी को देनेवाले पद्मनाभ नामक ब्राह्मण की कथा आयी है ।[५४] इससे स्पष्ट होता है कि वैदिकों की उञ्छवृत्ति से जैन आचार्य काफी परिचित थे । और अरण्य से उञ्छवृत्ति लाने के उल्लेख से कन्दमूल, फल, फूल, पत्ते आदि ग्रहण करने

---

५१. दश. अगस्त्यसिंह चूर्णि-८.२३; ९.३.४; १०.१६; चूलिका २.५

५२. वसुदेवहिण्डी पृ. २८४

५३. कथाकोशप्रकरण - पृ. ३१.२३

५४. ज्ञानपञ्चमीकथा ७.४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का वैदिक परम्परा का संकेत भी यहाँ मिलता है ।

जम्बुचरित ग्रन्थ में उञ्छशब्द में भिक्षा का प्रमाण बताने के लिए दो शब्दों का प्रयोग किया है । शकट के अक्ष के अग्रभाग जितनी तथा व्रण के उपर लगाये जानेवाली लेप जिनती ।[५५]

वैदिक परम्परा के पाण्डवचरित ग्रन्थ में जिसप्रकार कुन्ताग्र शब्द का प्रयोग किया है उसी तरह का यह स्पष्टीकरण है ।[५६]

उपदेशपद में हरिभद्र ने उञ्छ शब्द को शुद्ध विशेषण लगाया है ।[५७] और शुद्ध का स्पष्टीकरण बयालीस दोषों से रहित दिया है । इसका मतलब यह हुआ कि 'केवल भिक्षा' इतने अर्थ मे भी 'उञ्छ' शब्द का प्रयोग होता था ।

लगभग १६वीं शती के आसपास जैन आचार्यों द्वारा जो प्रकरण ग्रन्थ या लघुग्रन्थ लिखे गये उनमें श्री विजयविमलगणिकृत 'अन्नायउञ्छकुलकं' प्रकरण का समावेश होता है । आहारशुद्धि, आहार के अतिचार आदि का प्रतिपादन करनेवाला यह संग्रहग्रन्थ है । भिक्षावाचक सारे दूसरे नाम दूर रखते हुए इन्होंने 'अन्नायउञ्छकुलकं' शीर्षक अपने कुलक के लिए चुना यह भी एक असाधारण बात है । 'अज्ञातउञ्छ' का मतलब वे बताते हैं – 'अन्नावर्ज्जनादिना भावपरिशुद्धस्य स्तोक-स्तोकस्य ग्रहणं, अज्ञातो उञ्छग्रहणम् ।'

बौद्ध जातकों में उञ्छचरिया-

बौद्ध (पालि) ग्रन्थों में भिक्षाचार्य के लिए 'उञ्छ' शब्द का प्रयोग किया गया है या नहीं यह देखने हेतु मुख्यत: जातककथाग्रन्थ देखे विविध जातकों में कमसे कम २५ बार उञ्छचरिया, उञ्छापत्त, उञ्छापत्तागत इन शब्दों के प्रयोग मिलते हैं । यहाँ विविध स्थानों पर ब्राह्मण तापस के उञ्छाचर्या का निर्देश है । तथा बौद्ध भिक्षु (तापस, ऋषि) के उञ्छ का निर्देश है । अनेक बार वन में जाकर फलमूल भक्षण करना तथा बाद में गाँव-शहर आदि में आकर नमक तथा खट्टा (मतलब पका हुआ रसयुक्त भोजन) भोजन भिक्षा

५५. जम्बुचरित-१२.५४

५६. पाण्डवचरित-१८.१४३

५७. उपदेश पद - गा. ६७७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में ग्रहण करने का उल्लेख है । मतलब यह हुआ कि बौद्ध परम्परा में उञ्छ के वैदिक तथा जैन दोनों अर्थ समानता से ग्रहण किये हैं । बौद्ध भिक्षु वनों से कन्द-मूल, फल ग्रहण करते थे तथा विकल्प से घरों से पकी हुई रसोई का भी स्वीकार करते थे ।

उपसंहार

वैदिक (संस्कृत) तथा प्राकृत (जैन) ग्रन्थों में पाये गये उञ्छ सम्बन्धी सन्दर्भों का अवलोकन करके हम निम्नलिखित साम्य-भेदात्मक उपसंहार तक पहुँचते हैं ।

साम्य संकेत :

दोनों परम्पराओं में 'उञ्छ' इस धातु का 'इकट्ठा करना' (to glean, to collect, to gather) इतना ही मूलगामी अर्थ है । चान्द्रव्याकरण में तथा जैन महाराष्ट्री कथाकोश प्रकरण में इस मूलगामी अर्थ से इस धातु का प्रयोग पाया जाता है ।

* यह इकट्ठा करने की या चुनने की क्रिया अलग-अलग स्थान से अल्पमात्रा में ग्रहण करने का संकेत देती है । वे धान्य के कण हो या भिक्षा हो अलग-अलग स्थानों से अल्पमात्रा में ग्रहण की जाती है । अल्पग्रहण की मात्रा का सूचन करनेवाली उपमा भी दोनों प्राय: समान है । जैसे कि प्रमाण के लिए कुन्ताग्र या व्रणलेप तथा प्रवृत्ति की सूचक कबूतर या मधुकर ।
* वैदिक परम्परा का तापस तथा गृहस्थ खुद जाकर उञ्छ द्रव्य लाता है, उसी प्रकार जैन साधु भी स्वयं जाकर गृहस्थ से उञ्छ लाता है ।
* उञ्छवृत्ति का एक बार स्वीकार किया तो दोनों परम्परानुसार उसका पालन आजीवन करना पडता है ।
* उञ्छ (भिक्षा) अगर प्राप्त नहीं हुई तो दोनों उस दिन अनशन ही करते हैं ।

भेदसंकेत :

* यहाँ प्रयुक्त उञ्छ शब्द वैदिकों की उञ्छवृत्ति का निदर्शक है तथा जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधु की भिक्षा का वाचक है ।

* उञ्छवृत्ति व्रतस्वरूप है । माँगकर लाई जानेवाली भिक्षा नहीं है। जैन साधु खुद गृहस्थ के घर जाकर भिक्षा (उञ्छ) माँगकर लाते हैं ।

उञ्छ व्रत साधु और गृहस्थ दोनों के लिए है । भिक्षा व्रत सिर्फ साधुओं के लिए है। वैदिक परम्परा में उञ्छवृत्ति व्रतस्वरूप है। जैन परम्परा में यह साधु का नित्य आचार है ।

* उञ्छ में धान्य कण, भुट्टे तथा वृक्षों से कन्दमूल, फल, फूल, पत्ते आदि का ग्रहण होता है । भिक्षा में गृहस्थ के द्वारा गृहस्थ के लिए बनाई हुई रसोई से साधु प्रायोग्य आहार का विधिपूर्वक ग्रहण होता है। जैन सन्दर्भ में 'उञ्छ' शब्द का प्रयोग आहार के अलावा छादन, लयन, संस्तारक, द्वारपिधान आदि के बारे में भी प्रयुक्त किया गया है ।

* उञ्छवृत्ति में अग्निप्रयोग न की हुई खाने की चीजें लाई जाती हैं । उञ्छवृत्ति का धारक कभी भी पकाया हुआ आहार नहीं ला सकता । उञ्छवृत्ति से लाए गये सभी पदार्थ जैन दृष्टि से सचित्त है और जैन साधु को कभी भी कल्पनीय नहीं हैं । भिक्षा में अग्निप्रयोग के बिना, किसी भी वस्तु को सचित्त और अप्रासुक माना है ।

* उञ्छवृत्ति से लाया गया धान्य आदि पीसना, पकाना आदि क्रिया खुद उञ्छवृत्ति धारक करता है । भिक्षावृत्ति से लाये हुए आहार पर जैन साधु किसी भी तरह का संस्कार नहीं करता है ।

* उञ्छवृत्ति से लाये गये धान्य आदि का संग्रह किया जा सकता है । भिक्षा का संग्रह नहीं किया जाता ।

* संगृहीत उञ्छ का 'सत्पात्र व्यक्ति को दान देना', पुण्यशील कृत्य माना गया है । साधु के द्वारा लाई गई भिक्षा का अन्य साधुओं के साथ अगर संविभाग भी किया तो उसको दान संज्ञा प्राप्त नहीं होती ।

* उञ्छवृत्ति से भिक्षा लाने के पहले किसी भी मालिक की अनुमति नहीं ली जाती । इसके विपरीत मालिक की अनुमति के बिना जैन साधु सुई भी अपने मन से उठा नहीं सकता । अगर कोई भी चीज अनुमति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बगैर उठाए तो उसके अचौर्य व्रत का भंग (अदत्तादान) होता है ।

निष्कर्ष :

साम्य-भेदात्मक निरीक्षणों के आधार से हम इस निष्कर्ष तक पहुँचते हैं कि जैन प्राकृत ग्रन्थों में प्राप्त 'उञ्छ' शब्द निश्चित ही वैदिक परम्परा से लिया गया है । उञ्छवृत्तिधारी व्यक्ति समाज के लिए बहुत ही पूजनीय और आदरास्पद रहा होगा । इसी वजह से जैनों ने साधु के बारे में भी उञ्छ शब्द का प्रयोग किया होगा । वैदिकों से उञ्छ शब्द का तो ग्रहण किया लेकिन जैन परम्परा में प्राप्त साधु-आचार विषयक नियमों से वे प्रमाणिक रहे ।

* उञ्छ शब्द मूलतः कृषि से सम्बन्धित है । बालें या भुट्टों को काटा जाता है उसे 'शिल' कहते हैं और नीचे गिरे हुए धान्यकणों को एकत्र करने को 'उञ्छ' कहते हैं । यह शब्द अर्थ का विस्तार पाते-पाते भिक्षा से जुड गया और खाने के बाद रहा हुआ शेष भोजन लेना, घर-घर से थोडा-थोडा भोजन लेना, इसका वाचक बन गया । और सामान्यतः भिक्षा, पिण्डैषणा, एषणा, गोचरी आदि का पर्यायवाची जैसा बन गया ।
* वैदिक तथा जैन दोनों अर्थ समानतासे ग्रहण किये हैं । बौद्ध भिक्षु वनों से कन्द-मूल, फलग्रहण करते थे तथा विकल्प से घरों से पकी हुई रसोई का भी स्वीकार करते थे ।
* वैदिक परम्परा में उञ्छव्रतधारी साधु या गृहस्थ वर्तमान स्थिति में दिखाई देना कठिनप्रायः हो गया है । लेकिन साधुप्रयोग उञ्छ (भिक्षा) ग्रहण करनेवाले साधु-साध्वियों का भारतीय समाज में होना आज भी एक आम बात है । उञ्छ शब्द के इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह तथ्य सामने आता है कि जैन समाज में आचार की प्रथा अविच्छिन्न रखने का प्रयास यत्नपूर्वक किया जाता है ।

★★★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org